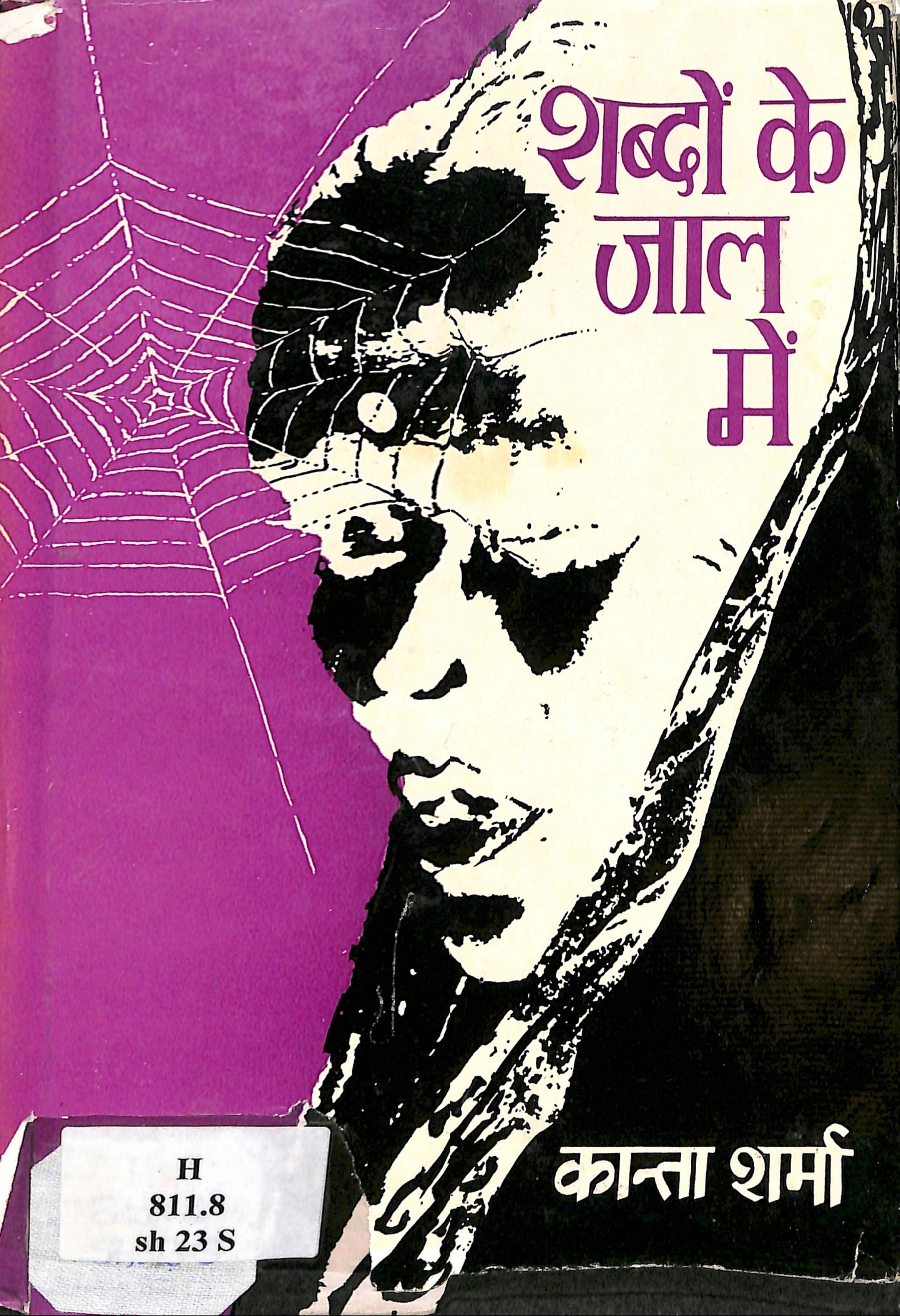

शब्दों के जाल में

कान्ता शर्मा

H
811.8
sh 23 S

शब्दों के जाल में

शब्दों के जाल में

(कविता-संग्रह)

Kanta Sharma

कान्ता शर्मा

शब्दों के जाल में
(कविता-संग्रह)

Library IIAS, Shimla
H 811.8 Sh 23 S: 1
00064241

© कान्ता शर्मा

प्रथम संस्करण : 1982

मूल्य : 20 रुपये

प्रकाशक :
कान्ता शर्मा
द्वारा, 3 डैलविल
समरहिल, शिमला-171005

आवरण : एस. करमाकर

मुद्रक :
भारती प्रिण्टर्स
दिल्ली-110032

हिमाचल प्रदेश कला, संस्कृति, भाषा अकादमी द्वारा प्रदत्त
800 रुपये की अनुदान राशि प्रकाशन हेतु साभार प्राप्त

संघर्षरत विकलाँगों के प्रति
सादर समर्पित

आशीर्वचन

कुमारी कान्ता शर्मा से मेरा परिचय कुछ महीनों का ही है। जब मुझे मालूम हुआ कि असाध्य रुग्णता के बावजूद कुमारी कान्ता शर्मा हिन्दी में शोधकार्य करना चाहती हैं तो मुझे विचित्र-सा लगा। शोध का प्रस्ताव उनके भाई की ओर से आया था। इनके विषय में जब मैंने अपने विभागीय सहयोगियों से बात की तो सभी ने कुमारी कान्ता शर्मा की प्रतिभा की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की और इनकी असाध्य रुग्णता के प्रति करुण सहानुभूति व्यक्त की। इन सहयोगियों से बातें करके मुझे पता चला कि कुमारी कान्ता शर्मा, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग की अत्यन्त प्रतिभाशालिनी, शिष्ट और कक्षाओं में नियमित रूप से उपस्थित रहनेवाली छात्रा रही हैं, एम०ए० (हिन्दी, संस्कृत) तथा एम०फिल० (हिन्दी) की परीक्षाओं में इन्होंने बहुत अच्छे अंक प्राप्त किए हैं और इनकी एम० फिल्० की शोध-परियोजना को परीक्षकों ने बहुत पसन्द किया है।

असाध्य रुग्णता के बावजूद, बिस्तर में क़ैद, कोई छात्रा शोध जैसे मुश्किल कार्य के लिए इतनी उत्सुक है, यह तथ्य मेरी जिज्ञासा को उद्बुद्ध करने के लिए पर्याप्त से भी अधिक था। चूँकि कुमारी कान्ता मेरे पास आ सकने की स्थिति में नहीं थीं अतः मैं इनसे मिलने इनके आवास पर स्वयं गया। बिस्तर पर उठकर बैठने की भी जिसमें शक्ति नहीं है, जिसका शरीर अस्थिपंजर मात्र है, उसमें अध्ययन और लेखन के प्रति इतनी सहज और दुर्निवार कामना देखकर मुझे अपार आश्चर्य हुआ। शरीर की रुग्णता ने न इनकी वाणी को आहत किया है न अध्ययन के प्रति इनकी निष्ठा को। धाराप्रवाह रूप से शुद्ध हिन्दी में बोलने वाली कुमारी कान्ता शर्मा ने उस दिन अपनी कुछ कविताएँ भी सुनाईं। उनकी कवि-ताओं का संकलन आपके हाथों में है। आप इन कविताओं के सम्बन्ध में स्वयं अपनी राय बना सकते हैं। मैं तो इतने से ही चकित हूँ कि जिस रोगिणी से आह-कराह, हताशा-निराशा और जीवन तथा जगत् के प्रति वितृष्ण-उपेक्षा की सम्भावना स्वाभाविक थी; वह कविता लिखती है, शोध जैसे अत्यन्त साधना-

सापेक्ष और रुक्ष कार्य के प्रति मनसा-वाचा-कर्मणा कृतसंकल्प है। विपरीत परिस्थितियों से टकराकर टूट और बिखर जाने वाले जीवन में पग-पग पर मिलते हैं, लेकिन जो सूली पर चढ़कर भी गा सकते हैं, शरीर की पंगुता को नकारकर विचार और भाव से उद्वेलित होकर कविता लिख सकते हैं, शोध जैसे श्रमसाध्य कर्म के प्रति एकनिष्ठ तत्परता रख सकते हैं वे हजारों और लाखों में भी शायद ही कभी देखे जाते हैं। मुझे यह कहने में रंचमात्र भी संकोच नहीं है कि कुमारी कान्ता शर्मा उन्हीं दुर्लभ हजारों-लाखों में से एक हैं।

बच्चन ने लिखा है, 'जिनके अधरों पर गीत नहीं धीमे पड़ते, वे फूल सरिस पर्वत का भार उठाते हैं।' मुझे विश्वास है कि कुमारी कान्ता शर्मा इसी तरह रचनात्मक और विधायक बनी रहीं तो एक-न-एक दिन अपनी अदम्य जिजीविषा के बल पर वे साहित्य जगत् को अपने उज्ज्वल कृतित्व से अवश्य अलंकृत करेंगी और भगवान् ने चाहा तो अपनी शारीरिक रुग्णता को भी वे अपने विधायक मनोबल से परास्त कर लेंगी। मेरी हार्दिक मंगलकामनाएँ निरन्तर उनके साथ हैं।

राजदेवसिंह

प्रोफ़ेसर, हिन्दी-विभाग,
डीन स्टूडेण्ट्स वेलफ़ेयर,
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला
16 फरवरी, 1982

पाठकों के प्रति

"शब्दों के जाल में" उलझा मानस काव्य-संरचना में प्रवृत्त होने के हेतु मानसिक भावाभिव्यंजना का आश्रय ग्रहण करता है और उसमें अन्तर्निहित भावनात्मक एवं कलात्मक सौन्दर्य के आधार पर ही किसी भी सर्जना को काव्यात्मक कसौटी पर परखा जा सकता है। भावुक व्यक्तित्व का स्वामी होने के नाते कवि, लेखक, चित्रकार अथवा किसी भी अन्य कला को अपना माध्यम बनाए कोई भी कलाकार अपनी लेखनी, तूलिका, छेनी अथवा कला में प्रयुक्त अन्य उपकरण के माध्यम से अपनी कलात्मक अभिरुचि को पूर्ण करने में प्रयासरत रहता है। प्रकृति के अभिनव रूपों के मोहक दिग्दर्शन के प्रति सम्मोहन सृष्टि के सौन्दर्य का परिचायक ही तो है। सर्जनात्मक कृतियों का आधार वन प्राकृतिक सुषमा, सामान्य जनजीवन की सामयिक परिस्थितिजन्य समस्याएँ एवं सुख-दु:ख के साये में पलते जीवन के कड़वे-मीठे अनुभव बनते हैं। अपने अनुभूत तथ्यों की अनुभूति को आत्मसात् कर विचारों की शृंखला में आबद्ध मानस आत्मिक उत्पीड़न को नज़रन्दाज कर भावना लोक की सृष्टि में विचरण करते हुए, कल्पना का आश्रय लिये भावों की दुनिया में मानो अपने व्यक्तित्व का स्वयमेव निर्माण करने के हेतु अपने जीवन-रूपी कटघरे में खड़ा संघर्षमय जीवन के सांसारिक प्रपंचों की मरीचिका में उलझकर रह जाता है। अपनी प्रत्यभिज्ञा के बल पर कुछ कर दिखाने की अदम्य आकांक्षा ही उसे दृढ़ निश्चय से युक्त अपने लक्ष्य अथवा जीवन पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा देती है। सम्भवत: मौलिक सर्जनात्मक प्रतिभा का उन्नयन तभी सम्भव है जब कोई भी रचनाकार अपनी कृति को जीवन्त अनुभूति प्रदान करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे।

वस्तुत: शाब्दिक संयोजन कल्पना से परे की चीज़ है, जिसमें विचारों, भावों एवं कल्पना का सामंजस्य अपेक्षित है। रचनाकार के स्वाध्याय, चिन्तन एवं मनन का स्तरानुकूल परिचय उसकी संरचना में स्पष्ट झलक जाता है। अदृश्य प्रेरणा से स्वत: अनुभूत अनुभव ही काव्य की रचना-प्रक्रिया के निर्मायक तत्त्व सिद्ध होते

हैं। कवि को लेखन भावनात्मक दायरे में बाँध लेता है। और वह बात की तह तक पहुँचने में लग जाता है। इस संघर्षमय परिवेश में प्रेरक स्वर का अधीनस्थ मन अनेकानेक अनुभवों से गुज़रने पर भाषिक संरचना में प्रवृत्त हो जाता है। स्मृतियों के दायरे में बँधा वही मन अनेकानेक घटनाचक्रों का उद्‌भावक बन जाता है और भावना कल्पना की सृष्टि करवा कर साहित्य को समाज के दर्पण की संज्ञा प्रदान करवा देती है। समसामयिक जीवन के अभिसाक्ष्य का प्रस्तुतीकरण ही भावाभिव्यक्ति के व्यवधानात्मक आवरण को मिटाकर जागरूक बौद्धिक चेतना के बल पर जन का जागरण करने में समर्थ हो सकता है। एतदर्थ कवि के मानस का जनता के हृदय से एकाकार होना एक ऐसी अनिवार्यता है, जो समय सापेक्ष है और रचनाकार यदि इस अभीप्सित कार्यक्षमता के प्रति सजग दृष्टि-कोण अपनाने में सक्षम हो, युगीन परिप्रेक्ष्य की विषमता का उन्मूलन किसी सीमा तक जनसामान्य द्वारा करवा सकें तभी जीवन की सार्थकता है।

प्रस्तुत काव्य संकलन में कतिपय आध्यात्मिक कविताओं के अतिरिक्त मधुर एवं कटु स्मृतियों के अभिव्यंजक जीवन के स्फुट एवं अस्फुट क्षणों का शब्दांकित रूप ही आप पाएँगे। अपनी जन्मस्थली के मनोरम प्राकृतिक परिवेश के प्रति मेरा बाल्यकाल से सम्मोहन रहा है और उसी समय निश्छल मन के प्राप्तव्य असीम स्नेह व दुलार ने मूक शिशु को वाचाल बना दिया। अपने प्रश्न-प्रतिप्रश्नों की बौछार से परिजनों को उलझाकर रख देना तो अब अतीत की स्मृति बनकर रह गया है। अपने बाल्यकाल से ही ग्रामीण परिवेश में पिछड़ेपन, अन्धविश्वास एवं प्रचलित कुरीतियों के प्रति विद्रोहात्मक प्रवृत्ति पनपने लगी थी क्योंकि महा-नगरीय परिवेश को निकट से जाँचने-परखने का अवसर मिलता रहा। सम्भवतः इसी कारण मुझे ग्रामीण एवं महानगरीय परिवेश में एक अद्‌भुत से सामंजस्य की परिकल्पना मन में सँजोए हर पल सोचने की विवशता का सामना करना पड़ता है। स्नायविक तनाव का शब्दांकन कर राहत पाने का मेरा प्रयास खिन्न एवं अवसन्न मनःस्थिति की अभिव्यक्ति ही कहलाएगा। मेरी कविताओं का आत्म-परक स्वरूप समष्टिगत परिप्रेक्ष्य को ध्यातव्य मान भी परखा जा सकता है। क्योंकि सबको आत्मवत् मान सम्पर्क में आने वाले जन-मन की उलझनें अन्तस् को उद्वेलित कर सर्जना के लिए बाध्य हुई हैं। जन-मन की उलझन और अपने सर्जन में अन्योन्याश्रित संस्थापना ने ही मुझे संरचना के हेतु उकसाया है। अपने जैसे समस्यात्मक परिवेश से घिरे पाठकों की इन कविताओं के सम्बन्ध में अव-धारणा सुधी एवं विज्ञ जनमानस की प्रतिक्रिया का विषय है। काव्य की रचना प्रक्रिया में मेरा हृदय सदैव कविता के ही अधीन रहा है, और कविताओं के स्तर

का अनुमान संकलन के पढ़ने पर ही आँका जा सकता है। मेरा आत्मसंतोष तो अपनी भावाभिव्यंजना के प्रति पाठकों की प्रतिक्रिया पर निर्भर है। मेरी अनुभूतियों को यत्किंचित् ग्राह्य रूप में जनसामान्य द्वारा समझना एक विवश की चाह समझें।

अपने शय्याग्रस्त जीवन में अनेकानेक हितचिन्तकों का स्नेहिल सम्पर्क ही मेरी अक्षय निधि है जिनके सहारे मेरा अस्तित्व वर्तमान है। मैं अपने विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अपने समस्त गुरुजनों के करुण सहानुभूतिपूर्ण वात्सल्य भाव की हृदय से आभारी हूँ जिनके माध्यम से जन्मपत्री के 'अतीव भाग्यशालिनी' शब्द का सत्यापन करते हुए अपने शोध प्रबन्ध के निदेशक श्रद्धेय डॉ० राजदेव सिंह की छत्रछाया पा सकी हूँ। उनके आशीर्वचनों के अनुरूप अपनी कार्यक्षमता के चिराग़ की मन्द लौ को उकसाए रखने के हेतु अभीप्सित मनोबल उनकी शिष्या को किसी सीमा तक मंगलकामनाओं को पूर्ण करने में प्रयासरत बनाए और उनके आशीर्वचन ही मेरे जीवन का लक्ष्य बनें। शेष सब तो एक असमर्थ की सामर्थ्य पर अवलम्बित है। मेरी असाध्य रुग्णता से कायल हुए उनके मानस को 'बिस्तर में क़ैद' बहुत-सी आशाएँ हैं और मेरी महत्त्वाकांक्षी मनोवृत्ति के प्रति आश्चर्य भी। उनका स्नेह, आग्रह, प्रेरणा मुझे कर्मोन्मुख बनाने में निरन्तर प्रेरित करते रहे हैं।

शय्याग्रस्त अवस्था में किसी भी रचना के प्रकाशन का कार्य कितना मुश्किल होगा, इसका अनुमान पाठक स्वयं लगा सकते हैं। पुस्तक के प्रकाशन के मूल में श्री रूपदास कश्यप, विधायक हिमाचल प्रदेश एवं श्री एम० आर० ठाकुर, सचिव, हिमाचल प्रदेश कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी का वैयक्तिक प्रोत्साहन तथा महत योगदान रहा है। मैं भारतीय स्टेट बैंक, बालूगंज शाखा, शिमला के प्रबन्धक श्री जे० एल० सूद की अतीव आभारी हूँ जिनके सहयोग से पुस्तक प्रकाशन हेतु बैंक द्वारा ऋण व्यवस्था प्रदान की गई।

अपने जीजाजी श्री कुन्दनलाल शर्मा के सहयोग से उऋण नहीं हो पाऊँगी जिन्होंने अविलम्ब मेरी प्रथम काव्यकृति का प्रकाशन करवाकर मेरा सपना साकार किया। उनके सहायक सहयोगियों में अशोक भाई एवं अन्य सभी के प्रति हृदय से आभारी हूँ।

अभी भी शिशुवत पालन-पोषण करने वाले मेरे परिजनों, मेरी निष्काम सेवा को सदैव तत्पर, अनेक उत्तरदायित्वों से आक्रांत मेरा अनुज ओमप्रकाश तथा मुझे निश्चिन्त व खुश रखने में मेरे अन्य छोटे बहन-भाइयों और अपने सुख-दुःख की सहभागिनी अन्तरंग सखी डॉ० चन्द्रकला गुप्त की मनोकामना इस पुस्तक के

प्रकाशन से पूरी हो रही है। इन लोगों के प्रति अपना आभार प्रकट करना मैं अपना दायित्व समझती हूँ।

अन्त में भारती प्रिंटर्स के श्री राममूर्ति एवं राम बुक बाईंडर के श्री तीर्थराम की हृदय से आभारी हूँ जिनके सहयोग से यथासमय पुस्तक का प्रकाशन सम्भव हो पाया है।

3 डैलविल क्वार्टर्ज़,
समरहिल,
शिमला-171005
16 मार्च, 1982

कान्ता शर्मा

क्रम

समर्पण	19
बचपन	21
आकाँक्षा	22
स्वप्नजीवी का जागरण	23
धुँधला भविष्य	25
अहसास	27
भावों की दुनिया	28
सम्पर्क का अभाव	29
जीवन : एक दोराहा	30
दिग्भ्रमित मन	32
मेरी प्यास	34
असहाय व्यक्तित्व	35
असफलता : प्रगति का सोपान	36
अन्तर्द्वन्द्व	38
रात की वात	39
सूनापन	40
मन की बात	41

अनुभूति	43
अतीत की स्मृति	44
शान्ति की खोज	45
अपना और पराया	46
वक़्त का तकाज़ा	47
जीवन : एक सफ़र	48
क्रोध : मानस रोग	50
हिमाचल महिमा	51
कवि-वाणी	52
तितिक्षा	54
वादल	55
अभिव्यक्ति	56
शरद ऋतु	57
मन की उलझन	58
वज्रपात	60
छव्वीस जनवरी	62
रक्षाबन्धन	63
हादसा	65
शोक-स्मृति	67
श्रद्धेय के प्रति	69
हमदर्दी	70
कविता की प्रतिक्रिया	71
चिन्ता	75
स्मृति संचयन	77
मोहभंग	79
आह्वान	80
उद्‌गार	81
सृष्टि	82
अनुगूँज	83
ग़मगीन	84
परिकल्पना	85
कवि और संरचना	86

विस्तर में क़ैद	88
नामस्मरण	91
चिन्तन	93
शनैः शनैः	95

मधुर एवं कटु स्मृतियों की अभिव्यक्ति,
आत्मपरक स्वरूप समष्टिगत परिप्रेक्ष्य में,
जीवन के स्फुट एवं अस्फुट क्षणों का शब्दकन।

समर्पण

विकलाँगों की करुण कहानी,
मार्मिक व्यथा नहीं अनजानी।

शारीरिक दु:ख बने मानसिक,
स्वभाव में बदलाव स्वाभाविक।
तनावग्रस्त स्वत: बनता मन,
आह भरा हो ऐसा जीवन।
कौन सुने दु:ख उनकी जबानी;
मार्मिक व्यथा नहीं अनजानी।।

चंचल मन स्थिरता पाता है,
हँसमुख गम्भीर बन जाता है।
मन का बोझ पराश्रित जीवन,
समस्या बनता यह निष्क्रिय तन।
साहस खोना निरी नादानी;
मार्मिक व्यथा नहीं अनजानी।।

जन्म से निरीह होने का दु:ख,
कैसे पाएँगे वे जीवन सुख?
परिस्थितिवश ही विवश बन,
असल उलझन उनका जीवन।
आँसू की कीमत किसने जानी;
मार्मिक व्यथा नहीं अनजानी।।

दुर्घटना होती आकस्मिक,
आतंकित होना स्वाभाविक।
विधि की विडम्वना ही सही है,
उससे छूटना सहज नहीं है।
हसरतें सव लगती वेमानी;
मार्मिक व्यथा नहीं अनजानी॥

महत्त्वाकाँक्षी मन भरमाया,
उलझी व्याधि पीड़ित काया।
असमय में गया असमर्थ वन,
क्षीणकाय और निर्वल तन।
नियति की सरासर मनमानी;
मार्मिक व्यथा नहीं अनजानी॥

आत्मिक वल अपनाना होगा,
मन को सवल वनाना होगा।
भरसक प्रयास करना सही है,
शुभचिन्तक की राय यही है।
सहने की आदत वनी पुरानी;
मार्मिक व्यथा नहीं अनजानी॥

प्रत्यभिज्ञा सम्वल हो प्राणी,
आहत अन्तस् निःसृत वाणी।
वोझ स्वयंमेव न लगे जीवन;
खोजना होगा ऐसा भी साधन।
दर्द रहेगी जानी पहचानी,
मार्मिक व्यथा नहीं अनजानी।
पीड़ाजन्य अनुभूति सही है,
संरचना का मर्म यही है।

बचपन

परिश्रान्त चित्त होने पर,
आ जाती है याद तेरी।
खो जाती हूँ स्वयं,
अतीत की स्मृतियों के
गहन अन्तराल में।
याद आता वह समय,
जब तुम थे
मैं थी
निश्छल एवं निष्कपट
था मेरा मन।
फिर भी
आया एक दिन,
खो गए तुम
अतीत के गर्भ में।
तेरे सतत अन्वेषण ने
क्लान्त कर दिया मुझे,
सर्वथा असमर्थ रही
अतीत प्राप्त करने में।
किन्तु विचारों की आधारशिला
बनी अब स्मृतिमात्र तेरी,
मनोहारी एवं अविस्मरणीय
समस्त अतीत के चलचित्र;
मादक द्रव्य में निहित
एक नशे के समान।
जब तुम थे
मैं थी
निश्चिन्त एवं स्वच्छन्द,
था मेरे जीवन का
वह सुनहला अंश।

6425

आकांक्षा

अन्तस्तल में मेरे,
भाव विचरें वहुतेरे।
काव्य रचना के लिए;
रुचि हो मन में मेरे॥

किसी सुन्दर वगिया में,
जव भी कोई फूल खिले।
माली के अन्तर्तम में,
एक अनोखा प्यार पले।
देवपूजा के लिए;
सवको आकृष्ट करे॥
अन्तस्तल में मेरे...

परोपकारी वनकर,
जन हों सज्जन एवं भले।
शुभ कर्मों के वल पर,
उनकी जीवन ज्योति जले।
कर्म करने के लिए;
जग जग में विचरे॥
अन्तस्तल में मेरे...

सुख और दुःख से भरी,
दुनिया में मन उलझे न कहीं।
मोह व माया से भरी,
जिन्दगी से निस्तार नहीं।
ज्ञान प्राप्ति के लिए;
इच्छा मन में उभरे॥
अन्तस्तल में मेरे...

स्वप्नजीवी का जागरण

सुख के सपने लेकर जागूँ,
दुःख सहने की शक्ति मांगूँ।
अदृश्य शक्ति ऐसा वल दो;
प्रेरणा सदा मंगलमय हो।

यह भाग्य सदा बलवान रहा,
उस शक्ति का वरदान रहा।
मैंने जो चाहा अपनाया,
सन्तोष भरा जीवन पाया।
परहित के लिए लगन मांगूँ;
सुख के सपने लेकर जागूँ...

हिम अंचल में पैदा होकर,
प्रकृति को निरखा जी भरकर।
वन्धुओं ने इतना स्नेह दिया,
मैंने अब तक कुछ भी न किया।
सामर्थ्य भरा अब मन मांगूँ;
सुख के सपने लेकर जागूँ...

पर्वत की छाया में पलकर,
यह मन स्वतन्त्र और भाव मुखर।
जनजीवन का तो मनन किया,
अनभव पाया कुछ भी न दिया।
मैं प्रगति सदा उनकी मांगूँ;
सुख के सपने लेकर जागूँ...

देवभूमि सी यह नगरी है,
आकर्षण का केन्द्र बनी है।
महानगर में समय विताया,
प्रदेश को मन न भूल पाया।
स्मृतियों में खोया मन मांगूँ;
सुख के सपने लेकर जागूँ...

सेवा का भाव हो लक्ष्य मेरा,
सब का जीवन संघर्ष भरा।
आत्मवत् सभी को मान लिया;
लक्ष्य पूर्ति का संकल्प किया।
प्रदेश की सुधि कभी न त्यागूँ;
सुख के सपने लेकर जागूँ...

धुँधला भविष्य

आलय के निभृत कोने में,
वीते आजकल मेरा दिन।
आगत भविष्य के बारे में,
शंकालु होता मन पलछिन।

महत्त्वाकांक्षा भरे मन में,
सपनों को धूमिल पाती हूँ।
निराशा के इस आलम में,
आशा का दीप जलाती हूँ।
पीड़ा तरसाती जब निशिदिन;
शंकालु होता मन पलछिन॥

अनेक जनों के साये में,
अतीत को सुखमय पाती हूँ।
वे समस्त ही व्यस्त अपने में,
अब उन को याद न आती हूँ।
सक्रिय हो पाऊँगी किस दिन;
शंकालु होता मन पलछिन॥

सन्ध्या की सुरम्य वेला में,
मन को भरमा न पाती हूँ।
नश्वर जीवन को कोसने में,
कोई तथ्य भी नहीं पाती हूँ।
गिन रही हूँ बेकसी के दिन;
शंकालु होता मन पलछिन॥

जब भाव उठे मेरे मन में,
मैं उसको भुला न पाती हूँ।
इस भावनात्मक घेरे में,
बस सोचती ही रह जाती हूँ।
चिन्तन नहीं होता जिस दिन;
शंकालु होता मन पलछिन।।

स्मृतियाँ घेरें दु:ख के क्षण में,
मन को समझा न पाती हूँ।
जब कोई रहस्य नहीं मन में,
अनकही बात कह जाती हूँ।
भावना व्यक्त न हो जिस दिन;
शंकालु होता मन पलछिन।।

अहसास

निष्क्रिय जीवन में क्या सुख है?
इस तन की पीड़ा का दुःख है।

बेचैन मन को चैन नहीं,
बोझिल पलकों में नींद नहीं।
तनाव भरा हो जब मन में,
क्या रस रह जाता जीवन में।
स्वभाव का बदलता रुख है;
निष्क्रिय जीवन में क्या सुख है?

जीवन जीना कोई खेल नहीं,
आँसू का कोई मोल नहीं।
सुख और दुःख की छाया में,
मन क्यों बँध जाता माया में?
संघर्ष सभी के सम्मुख है;
निष्क्रिय जीवन में क्या सुख है?

जब तन ही मददगार नहीं,
चिन्ता करने में सार नहीं।
जब उलझें ऐसी उलझन में,
निमग्न मन साहस सँजोने में।
धुँधला भविष्य सम्मुख है,
निष्क्रिय जीवन में क्या सुख है?

भावों की दुनिया

भावों की दुनिया में जीना हो आसान,
हालात मन के समझें न नादान।

यह कुदरत दिखाती अद्भुत नज़ारा,
हर रूप इसका लगे सबको प्यारा।
आकाश में चमकें चन्दा सितारे,
धरती पे होते सब करतब न्यारे।
माया के लोभी मन को तू पहचान;
भावों की दुनिया में जीना हो आसान।

विश्वास के बल पे जीवन हमारा,
दुःख में जो साथी हो बनता सहारा।
सुख के तो साथी हों बहुत बिचारे,
दुःख में वे पहुँचे न पास हमारे।
स्वार्थी मनोवृत्ति से न हो अनजान;
भावों की दुनिया में जीना हो आसान।

मानसिक कसक को जिसने बिसारा,
चिन्तन की वृत्ति को उसने उभारा।
संजीदगी ज़िन्दगी को सँवारे,
जीता है कवि यादों के सहारे।
अभिव्यक्ति ख्याल का मानना अहसान,
भावों की दुनिया में जीना हो आसान।

सम्पर्क का अभाव

सम्पर्क आजकल टूट गया,
कविता लिखना ही छूट गया।

कहने को तो यह महानगर,
पर केन्द्र बना बस अपना घर।
जब बाहर ही न निकल पाऊँ,
तब भाव कहाँ से मैं लाऊँ?
हिलना-मिलना ही छूट गया;
सम्पर्क आजकल टूट गया।

पत्रों का था जो सिलसिला,
क्रमशः वह भी अब टूट चला।
कारण कुछ भी न समझ पाऊँ,
ख़त देने से भी कतराऊँ।
धीरज का दामन छूट गया;
सम्पर्क आजकल टूट गया।

सब को मन से ही चाहा था,
सप्रयास साथ निबाहा था।
मैत्री का स्तर न समझ पाऊँ,
उलझन से कैसे उबर जाऊँ।
अपने से ही मन रूठ गया,
सम्पर्क आजकल टूट गया।

जीवन : एक दोराहा

इस जीवन के दोराहे पर,
खुशियाँ भी हैं और ग़म भी हैं।
मायावी और अद्भुत जग में,
निश्चिन्त जन मिलते कम हैं।

ऐश्वर्य का कतई अभाव नहीं,
पूर्ण कोई ऐसा चाव नहीं।
अदम्य इच्छा की पूर्ति में,
मग़रूर भी हैं, बेवस भी हैं।
इस जीवन के दोराहे पर...

किस मन में आज तनाव नहीं,
समस्याओं का भी अभाव नहीं।
सब संघर्षों को सहने में,
सन्देही भी हैं, सचेत भी हैं।
इस जीवन के दोराहे पर...

जिसका गम्भीर स्वभाव नहीं,
और अधिक सोचने का चाव नहीं।
अपनी उलझन सुलझाने में,
उतावले भी हैं, उत्सुक भी हैं।
इस जीवन के दोराहे पर...

परदुःख से कातर बने नहीं,
जिसने खुद पीड़ा सही नहीं।
उसको अहसास दिलाने में,
सहमत भी हैं, असमर्थ भी हैं।
इस जीवन के दोराहे पर...

चंचल मन स्थिर रह सके नहीं,
इस को परखना सहज नहीं।
अन्तर्दृष्टि अपनाने में,
समर्थ भी हैं, अबोध भी हैं।
इस जीवन के दोराहे पर...

सब को समझाना सुगम नहीं,
हो आत्मिक बल की कमी नहीं।
मानस की भावना के वश में,
आप भी हैं और हम भी हैं।
इस जीवन के दोराहे पर...

दिग्भ्रमित मन

अक्सर भ्रमित मन को लिए,
नवकल्पना में खो गए।
सुनहरे सपने सँजो लिए,
धुँधले बने वे किसलिए ?

जग में कई परेशान हैं,
अधूरे जब अरमान हैं,
प्रयास कर हैरान हैं,
मुश्किलें कहाँ आसान हैं ?
समस्याओं में उलझे हुए;
समाधान खोजने के लिए--
अक्सर भ्रमित मन...

परिचित कई इन्सान हैं,
मनोवृत्ति से अनजान हैं।
बोझ बने अहसान हैं,
जब कभी भी वे मेहरबान हैं।
मन की थाह लेते हुए;
स्वभाव परखने से लिए—
अक्सर भ्रमित मन...

मार्ग में जो व्यवधान हैं,
जीवन के कड़े इम्तिहान हैं।
व्यतिक्रमों में जो सावधान हैं,
होते नहीं नादान हैं।
यथार्थ को समझते हुए;
मानसिक संयम के लिए—
अक्सर भ्रमित मन...

गुण ही सही पहचान हैं,
जो प्रगति के सोपान हैं।
सव उस के ही कद्रदान हैं,
कल्पनाएँ तो अनुमान हैं।
वर्तमान में जीते हुए,
संघर्ष सहने के लिए—
अक्सर भ्रमित मन...

मेरी प्यास

अपनत्व भाव का प्यासा मन,
परिजन में खोजे अपनापन।
जब निश्छल स्नेह न पाता है,
वह प्यासा ही रह जाता है।

अपनी दुविधा में अपना वन,
अलगाव भरा पावन वन्धन।
मन में हलचल उपजाता है,
कैसा यह रिश्ता नाता है। अपनत्व भाव...

दंश भरा हो स्पष्ट कथन,
गिरवी रखकर जन अन्तर्मन।
मनचाहा कब कर पाता है,
ऐश्वर्य हेतु बिक जाता है। अपनत्व भाव...

आखिर अतीत वना वचपन,
अव कव तक होगा भोलापन।
पर्याप्त समझ में आता है,
पर अव मन सह न पाता है। अपनत्व भाव...

ज़रूरत अमूल्य अथवा जीवन,
बुझते दीपक की लौ यह मन।
अहसास दिला न पाता है,
पर सूक्ष्म दृष्टि अपनाता है। अपनत्व भाव...

सम्पर्क में आते जन के मन,
उन की उलझन मेरा सर्जन।
अन्योन्याश्रित बन जाता है,
संरचना को उकसाता है।
अपनत्व भाव का ... ...

असहाय व्यक्तित्व

लाचार मनुज तब होता है,
जब तन पीड़ित हो जाता है।
वह लक्ष्य महान बनाता है,
पर कर कुछ भी न पाता है।

उसका बेबस हो जाता मन,
मन में भी छा जाती उलझन।
उलझन से भी न उबर पाए,
शारीरिक पीड़ा तरसाए।
जब असह्य कष्ट से रोता है;
लाचार मनुज तब होता है॥

औषधि से हो रोग प्रशमन,
सेवन से पीड़ा का हो शमन।
जब कष्ट जरा कम हो जाए,
पीड़ित का मन शांति पाए।
सर्वथा अशक्त जब होता है;
लाचार मनुज तब होता है॥

संयमी जन सहनशील बन,
साहस से जीता स्व जीवन।
यत्किंचित् स्वस्थ हो पाए,
कर्मलीन वह जन बन जाए।
जब लक्ष्य पूर्ण नहीं होता है;
लाचार मनुज तब होता है॥

मनचाहा स्वाध्यायी जीवन,
सर्वसुलभ होता लेखन।
जब मन में भाव उमड़ आए,
कविता का विषय बन जाए।
जब भाव ग्राह्य नहीं होता है;
लाचार मनुज तब होता है॥

असफलता : प्रगति का सोपान

हे असफलता !
कृतज्ञता ज्ञापन हेतु
शब्द नहीं मेरे पास,
तेरा बहुत धन्यवाद।
चल रही हूँ मैं
सफलता के मार्ग पर,
तेरे ही आगमन से
परिश्रम की अनिवार्यता
उसका मूल्य समझ आया मुझे।

अच्छा हुआ,
मेरी मंज़िल के मार्ग पर
तेरा व्यवधान हुआ;
अन्यथा जग बाधाएँ
असह्य बन जाती।
क्षमा करना,
तेरा मान न किया
जब तुमने प्रथम बार कदम चूमे।

तेरी परोपकारजन्य अनुभूति,
किन्तु सर्वथा अनभिज्ञ
रहा मेरा मन;
चाहे जीवन के
कंटकित मार्ग पर
चलने की राह प्राप्त हुई मुझे।

निस्सन्देह तुम,
विन बुलाए अतिथि सदृश
प्रादुर्भत हुई।
फिर भी हम,
चाहे तेरा मूल्य समझें या नहीं;
तेरे द्वारा सब पर अहसान होगा।

मानस के उद्वेलित होने पर,
मात्र तेरे एक संदेश पर ही
सिर माथे पर बिठाना होगा तुझे।
जव भी जहाँ भी जैसे भी
तुम्हारा आगमन हो जाए;
हे असफलता !
वन प्रगति का सोपान।

अन्तर्द्वन्द्व

परिहास मेरा मन करता है,
उपहास नहीं वह होता है।
परिश्रान्त मेरा मन वन जाए,
जव भाव न कोई समझ पाए।

जग में सब सहना पड़ता है,
मन खुद को समझा लेता है।
मानव भावुक जब बन जाए,
वह सहनशील न बन पाए।

सुख में जो बहुत इतराता है,
वह दुःख को झेल न पाता है।
समभाव से इसे जो अपनाए,
सन्तोषी मानव कहलाए।

हर पल मन सोचा करता है,
सोचने से कुछ नहीं होता है।
विचार कर्म जब बन जाए,
जीवन सफल तब हो पाए।

सत्कर्म जो जन कर पाता है,
वह जग में नाम कमाता है।
यश का भागी भी बन जाए,
जब सत्य मार्ग को अपनाए।

मानस कवि बनना चाहता है,
असमर्थ स्वयं को पाता है।
भावों की परिधि में घिर जाए,
शाब्दिक रचना तब बन पाए।

रात की बात

अंधियारी रात विताना,
चुपके से सो जाना।
सूनापन लगे सुहाना,
भावों में खो जाना।

नीले नभ का दृश्य निरखना,
मोहक लगती चन्द्र ज्योत्स्ना।
तारों का झिलमिलाना;
अपने मन को वहलाना।
अंधियारी रात बिताना...

निष्क्रिय हो कर समय विताना,
अप्रिय होता सब ने जाना।
अदृश्य प्रेरणा को पाना;
पीड़ा को मन विसराना।
अंधियारी रात बिताना...

दुःख में कभी नहीं घवराना,
कष्टों को जन सहते जाना।
नियति का लगे वहाना;
अपना मन सवल बनाना।
अंधियारी रात बिताना...

सूनापन

गिरि श्रृंखला के पीछे मानों छिपते सूर्य का आवास,
वसन्त की यह ऋतु मनोरम वर्ष का चैत्र मास।
असहनीय शिरोवेदना पता नहीं किस कारण,
पता नहीं कैसे होगा असह्य पीड़ा का निवारण।
मस्तिष्क को अजब-सी थकान का आभास,
स्नायविक तनाव का भी हो रहा अहसास।
न चाहते हुए भी मन नितान्त उदास,
अनुभूति खोजती अनुभव आसपास।
सम्पर्क में आने वालों की सारी समस्याएँ,
व्यक्तिगत से स्वयमेव समष्टिगत बन जाएँ।
अनेकानेक अड़चनों को नज़रन्दाज़ न कर पाए,
महत्त्वाकाँक्षी के सपने पल में बिखर जाएँ।
अन्तर्द्वन्द्व के कारण मन में हो उद्वेलन,
अज्ञात से आक्रोश के कारण चिन्तित बन।
जब कभी भी सताती न सुलझती उलझन,
व्यथित अन्तस्तल को भाता केवल सूनापन।

मन की बात

अपनत्व में अलगाव की सम्भावना कोई नहीं,
बस मन की बात समझने की शक्ति ही खोई नहीं।

अपनी व्यथा से व्यथित जन की दृष्टि सह पाती नहीं,
इस भाग्य की विडम्बना भी अब सही जाती नहीं।
अपने जनों की सहानुभूति अभी तक खोई नहीं,
नाकाम रहकर ज़िन्दगी नीरस न बन जाए कहीं।
सहसा स्मृति के सहारे से समस्या सुलझ सके नहीं;
अपनत्व में अलगाव की......

मानसिक तनाव से भी हाथ कुछ आता नहीं,
विवश होकर चाह के अनुकूल राह पाता नहीं।
सान्त्वना रूपी प्रेरणा अगर कभी पाई नहीं,
उदासीन दिग्भ्रमित मन भटक न जाए कहीं।
सहसा स्मृति के सहारे से कोई संभल सके नहीं;
अपनत्व में अलगाव की......

आशा का दामन पकड़ के निराश मन होता नहीं;
अस्तित्व के अहसास को भी वह कभी खोता नहीं।
नियति की प्रवंचना के समक्ष कौन झुका नहीं,
निरीह व्यक्ति के लिए न कालक्रम रुका कहीं।
सहसा स्मृति के सहारे से समय गुज़र सके नहीं;
अपनत्व में अलगाव की......

सार्थक अभिव्यक्ति हेतु यथार्थ से भटका नहीं,
स्वभाव से ही बोधगम्य मन कहाँ अटका नहीं?
परदु:ख से कातर मन राहत कभी पाए नहीं,
उलझनें सुलझाने का साहस न मिल पाए कहीं।
सहसा स्मृति के सहारे से संघर्ष सह सके नहीं;
अपनत्व में अलगाव की ...

अविस्मरणीय परिचय का क्षण कभी विस्मृत नहीं,
क्षणिक जीवन के प्रति क्या स्नेह अपरिमित नहीं?
सहायक का चिरस्नेहिल रूप भुला पाई नहीं,
हसरत उऋण होने की मन में न रह जाए कहीं।
सहसा स्मृति के सहारे से सर्जन भी हो सके नहीं;
अपनत्व में अलगाव की ... ...

अनुभूति

चुपचाप पड़े रहने में भी क्या कोई जन सुख पाता है,
न जाने यह ख्याल मुझको क्यों बार-बार सताता है।
मन जी भर कर कर लो चिन्तन,
आएगा नहीं फिर बीता दिन।
चलता - फिरता पुर्जा बन कर,
बदलेगा तेरा आत्मिक स्वर।
आशावादी मन ही जन की सामर्थ्य को उकसाता है,
न जाने यह ख्याल मुझको क्यों बार-बार सताता है।
पुरुषार्थ की नींव पे जो जीवन,
आगत विपत्ति को करे सहन।
मन फल की चिन्ता कभी न कर,
मेहनत आँकेगी जन का स्तर।
बेबस हालत होने पर भी मन कहाँ से ताकत पाता है,
न जाने यह ख्याल मुझको क्यों बार-बार सताता है।
अक्सर भावों में उलझे मन,
धीरज से सब कुछ करे सहन।
अपनी हर सम्भव कोशिश पर,
आकुल न होगा यह अन्तर्।
सहते-सहते निर्बल तन मन साहस अपनाता जाता है,
न जाने यह ख्याल मुझको क्यों बार-बार सताता है।

अतीत की स्मृति

स्मृतियों ने मन को सताया है,
इसे विरला ही समझ पाया है।

अपने वचपन के दिन सारे,
हँसी खेल में ही गुज़ारे।
क्या था पता इस लाचारी का,
अव ग़मगीन परिजन सारे।
मन यह दुःख झेल न पाया है;
इसे विरला ही समझ पाया है।

भविष्य के वे सपने सारे,
क्यों न साकार होते हमारे।
दोप वस भाग्य की छलना का,
नियति के वश में सारे।
सपना साकार न हो पाया है;
इसे विरला ही समझ पाया है।

वात्सल्य और स्नेह के सहारे,
फिर भी वीत रहे दिन सारे।
चिराग़ वस कार्य की क्षमता का,
बुझता-सा देख के मन हारे।
आत्मा ने ही लौ को उकसाया है;
इसे विरला ही समझ पाया है।

आत्मिक वल से अरमान सारे,
शायद पूर्ण हो सकें हमारे।
अनुभव दुःखानुभूति का,
सहा सुख की आस के सहारे।
सुख के हेतु दुःख बिसराया है;
इसे विरला ही समझ पाया है।
स्मृतियों ने मन को सताया है।।

शांति की खोज

मन में उठे अनेक भाव,
काव्य संरचना का भी चाव।
कविता क्या जाएगी बन?
अशान्त बन सोचे मन।

आज उमस भरा मौसम,
उदासी से अस्थिर बन।
अधिक सोचने में अक्षम,
अशान्त बन सोचे मन।

उलझी हुई मन:स्थिति,
भोगनी होगी परिस्थिति।
कैसे सुलझेगी उलझन,
अशान्त बन सोचे मन।

पर्याप्त स्नेहिल परिवेश,
समस्या भी नहीं विशेष।
आत्मविश्वासहीन बन,
अशान्त बन सोचे मन।

आत्मिक बल से उन्नयन,
सम्भवतः सहायक बन।
हीन भावना का कर शमन,
शान्त करेगा अशान्त मन।

अपना और पराया

कौन है अपना कौन पराया,
सोच-सोच कर मन भरमाया।
जब जब अपनों ने बिसराया,
सहारा बन कर आया पराया ।।

स्वार्थ की धुरी पर रिश्ते नाते,
अधिकतर अपना साथ निभाते।
पराये में देख अपनापन,
स्वतः स्वाभाविक मैत्री बन्धन।
अपना सा समझ राह पर लाया;
भला वह अपना और पराया ।।
कौन है अपना...

जग में इतना मोह और माया,
कोई उलझने से न रह पाया।
जब जब मिले तनाव दुःखदायक,
अन्तरंग बन पराया सहायक।
अहसानों के बोझ से दबी काया;
आत्मविश्लेषण न हो पाया ।।
कौन है अपना...

वक्त का तकाज़ा

जज़्बात को ख्यालात में तब्दील कर,
ख्यालात का इज़्हार बन जाता गज़ल।
लफ़्ज़ों को अल्फ़ाज़ में जज़्ब कर,
नज़्म बन सके तो अल्लाह् का फ़ज़ल ।।

किसी की भी ज़िन्दगी का सफ़र,
पता नहीं कब पाएगा मंज़िल ?
दुनिया के झमेलों में उलझ कर,
ज़िन्दगी की किश्ती ढूंढ़ती साहिल ।।

किसी की भी मेहनत को आँक कर,
सब जान पाते कोई किस काबिल ?
काबलियत का अहसास करवाने पर,
ज़िन्दगी में सब कुछ होता हासिल ।।

किसी की भी अहमियत को जानकर,
शख़्सियत की सीख सीखने काबिल।
वक़्त की कीमत को समझ कर,
ज़िन्दगी में बीते हर घड़ी और पल ।।

जीवन : एक सफ़र

मोह लेती पर्वतमालाएँ,
हर यात्री के अन्तर्तम को।
जीवन रूपी सफ़र निभाएँ,
यही सोहता है हर जन को।

प्रकृति के हों खेल निराले,
रम जा उस में मन मतवाले।
चार घड़ी का यह जीवन है,
सुखी जहाँ सन्तोषी मन है।
अपना ले मन परम तत्त्व को;
राही सही मार्ग अपनाएँ ।।
मोह लेती पर्वतमालाएँ...

धरती पर हरियाली छाई,
जनमानस में सुकून लाई।
अपनेपन से भरा जन का मन,
स्नेह दया से होवे सम्पन्न।
मिटा के जातिगत भेदभाव को;
अपनो धारणा बनाएँ।।
मोह लेती पर्वतमालाएँ...

नीलगगन की शोभा न्यारी,
सूरज से धरती उजियारी।
अपने शुभ कर्मों के बल पर,
जन तू जग को उजियारा कर।
स्मृतियाँ ही अवशिष्ट बाद को;
तन मिट्टी में लय हो जाएँ।।
मोह लेती पर्वतमालाएँ...

स्निग्ध चन्द्रमा की किरणें हैं,
नभ में भी तारे छिटके हैं।
मानस का जो अन्तस्तल है,
विचार सरणि का उद्गमस्थल है।
भावनिहित इस स्निग्धता को;
अभिव्यञ्जित कर पाएँ।।
मोह लेती पर्वतमालाएँ...

हिमाँचल की छटा मनोहर,
देवभूमि लगती अति सुन्दर।
श्रद्धा से आप्लावित जब जन,
चेहरे पर झलके भोलापन।
जोगी से निर्लिप्त भाव को;
हम कैसे अपनाएँ।।
मोह लेती पर्वतमालाएँ...

क्रोध : मानस रोग

क्रोध का प्रशमन करो,
मानव सदा तुम खुश रहो।
बात सब की तुम सुनो,
फिर सदा अपनी कहो।

क्रोध करना भूल है,
यह सब दु:खों का मूल है।
स्थिरचित्त सदा बनो,
सब के भले की तुम कहो।

क्रोध जब भी जन करेगा,
क्षोभ तब मन में रहेगा।
धैर्यवान सदा बनो,
बेसमझ बन मत रहो।

क्रोध जब जन में रहे,
संयमित जीवन न रहे।
शान्त चित्त मनुज बनो,
विवेकशील बने रहो।

क्रोध मानस-रोग है,
आक्रोश से यह क्षोभ है।
सत्य पथ सदा चुनो,
विघ्न बाधाएँ सहो।

क्रोध मानस में न होगा,
शान्त यह जीवन रहेगा।
संयमी जन तुम बनो,
सफल इस जग में रहो।

हिमाचल महिमा

हिम के आँचल में निवसित हमारा प्रदेश,
भव्य एवं सुमनोहर इसका प्राकृतिक परिवेश।
गिरि शृंखलाओं से अनोखी छटा का उन्मेष,
पर्यटक आकर्षण हेतु धारण करे नूतन वेष॥

हरित क्षेत्र युक्त धरा की हरीतिमा मनोहारी,
मानस को विभोर करती शीतल पवन सुखकारी।
जनजीवन व्यस्त करे परिश्रम का अवलम्बन,
यहाँ मुख्य व्यवसाय कृषि एवं पशुपालन॥

यहाँ पिछड़ापन क्रमशः मिटता जा रहा है,
प्रदेशवासी उन्नति पथ पर जाना चाह रहा है।
प्रत्येक क्षेत्र में ही प्रगति हेतु उन्मुख जन,
पर्वतीय ग्रामों के विकास का भी प्रचलन॥

प्राकृतिक सुषमा से सम्पन्न भूमि यहाँ,
मोहक दृश्यों की अवतारणा सुलभ जहाँ।
परिस्थितिवश हमारा चाहे कहीं हो निवास,
अन्तस् में छिपी होगी प्रदेशोन्नति की आस॥

दर्शनीय स्थल है यह देवताओं की नगरी,
हर जनमानस में अविचल भक्तिभावना भरी।
प्रतीयमान होता योगी का बसेरा हिमाचल,
ध्यानस्थ भावधारा पाना नहीं यहाँ मुश्किल॥

सुरम्य प्रकृति का सदा रहे यहाँ शासन,
यथोचित रूप से सब करें जीवन यापन।
परजनहिताय सबका हो समर्पित जीवन,
स्वर्णाक्षरों में हो सके प्रदेश का नामाँकन॥

कवि-वाणी

उदासी से भरा हो समाँ जहाँ,
मुक्तक रचना सम्भाव्य वहाँ।
जब मन में पीड़ा वसती है,
कवि वाणी मुखरित होती है॥

बोझिल हो वातावरण जहाँ,
जनमानस में वेदना वहाँ।
जब भावना व्यथा भोगती हैं,
कवि वाणी मुखरित होती है॥

नियति का चलता चक्र जहाँ,
हो सहनशक्ति अनिवार्य वहाँ।
निराशा स्वाभाविक होती है,
कवि वाणी मुखरित होती है॥

आँसू से भरे हों नयन जहाँ,
भावुक अन्तस् तड़पता वहाँ।
यह सृष्टि नश्वर होती है,
कवि वाणी मुखरित होती है॥

संघर्षों का अम्बार जहाँ,
जन कर्मलीन हो जाए वहाँ।
जब उलझन नहीं सुलझती है,
कवि वाणी मुखरित होती है।।

सुख और दुःख हों क्षणिक वहाँ,
जन का मन आकुल होता जहाँ।
प्रभु लीला न्यारी होती है,
कवि वाणी मुखरित होती है।।

शब्दों का बिछा हो जाल जहाँ,
जिज्ञासु मानस उलझता वहाँ।
जब दिव्य प्रेरणा मिलती है,
कवि वाणी मुखरित होती है।।

तितिक्षा

सुख से पुलकित दु:ख से विचलित,
रहता है हर मानव का मन।
दु:ख को तो जन भूल न पाए,
सुख में उसकी सुधि बिसराए।
ऐसा ही तो होता यह मन;
सहनशील कैसे जाए बन?

सुख के दामन में तो मानव,
अपने जीवन में इतराए।
मन में जब हो दु:ख का भाव,
उदासी जीवन में छा जाए।
सताती हो जब मन को उलझन;
सहनशील कैसे जाए बन?

क्षणिक सुख के आवेश में,
पीड़ित का दु:ख समझ न पाए।
स्वपीड़ा के आक्रोश में,
बैठा रहता आस लगाए।
दुविधा में जब घिरा रहे मन;
सहनशील कैसे जाए बन?

सुख-ज्योति से आलोकित,
मानस दु:ख-तम अपना पाए।
शालीनता से परिचालित,
उस का जीवन बीत जाए।
समस्याओं से आवेष्टित मन;
सहनशील कैसे जाए बन?

बादल

नील गगन में छाए बादल,
जिनका रूप श्वेत और श्यामल।
ग्रीष्मातप में वर्षा का जल,
शुष्क धरा को करता शीतल ।।

कोनों में जब सिमटें बादल,
निखरा लगता तब धरतीतल।
अतिवृष्टि से होती हलचल,
बाड़ सभी को करती व्याकुल ।।

सामान्य वर्षा से युक्त स्थल,
उपजाऊ धरती का सम्बल।
आशातीत जब होती फसल,
कृषकों की हो मेहनत का फल ।।

नभ में बिखरे-बिखरे बादल,
सूरज की किरणों से हिलमिल।
मोहक ऋतुसर्जन से उत्फुल्ल,
इन्द्रधनुष की शोभा अविरल ।।

मेघाच्छन्न अभी तो नभतल,
जोर से गरज़ रहे ये बादल।
और तड़ित की चितवन चंचल,
पता नहीं वर्षा हो किस पल ?

अभिव्यक्ति

शब्दों के जाल में जब कोई उलझता जाता है,
मानसिक भाव की अभिव्यंजना कर पाता है।

कल्पना से परे होता है शब्द संयोजन,
जिसका आधार सदा होता चिन्तन व मनन।
प्रेरणा से स्वतः अनुभूति हो जाती है,
काव्य रचना की प्रक्रिया को अपनाती है।
शब्दों के जाल में... ... ...

कवि को लेखन किस ओर ले जाता है,
अनुभव कब और कैसे वह पाता है?
भावना लोक में ही विचरा जा सकता है,
बात को तह को विरला ही जान सकता है।
शब्दों के जाल में... ... ...

सुख और दु:ख के साये में पलता जीवन,
प्रेरक स्वर भी अपनाता अनुभव पलछिन।
भाषिक संरचना सहज हो जाती है,
काव्य-कृति को अलंकृत कर पाती है।
शब्दों के जाल में... ... ...

मधुर और कटु स्मृतियों का संयोजन,
घटनाचक्रों का उद्भावक जाता बन।
भाव ही कल्पना की सृष्टि करवाता है,
समाज का दर्पण साहित्य कहलाता है।
शब्दों के जाल में... ... ...

शरद ऋतु

शरद ऋतु तेरा आगमन,
शिथिल सा तन शीतल पवन।

चाहे ठंडक का तीखापन;
तारों भरा नभ लगे सुशोभन।
चन्द्रमा तेरी चाँदनी,
सदा होती मनभावनी।
शुक्ल पक्ष में चन्द्र दर्शन;
शरद ऋतु तेरा आगमन।।

सूर्य की लालिमा मोहे मन,
उष: काल की छटा मनहरन।
हरियाली लगती सुहावनी,
चहकतीं चिड़ियाँ लुभावनी।
प्रकृति को निरखा करें नयन;
शरद ऋतु तेरा आगमन।।

रात्रि की कालिमा हो सघन,
भावुक मन व्याकुल जाता बन।
सान्त्वना हो सुखदायिनी,
मानसिक शांति प्रदायिनी।
आत्मिक बल पर हो मेरा मनन;
शरद ऋतु तेरा आगमन।।

मन की उलझन

इस भावुक मन के आँगन में,
भावनाओं का हो संयोजन।
संयोजित शब्द बनाने में,
सर्वदा सहायक चिन्तन।।

इस रंग बदलती दुनिया में,
निरन्तर परिवर्तन पाता जन।
अपने अतीत, आगत भविष्य में,
उलझा रहता उसका मन।।

इस नीले नभ के साये में,
कर्त्ता करता जग संचालन।
निखिल सृष्टि के सर्जन में,
माया से मोहित होता जन।।

इस माया के सम्मोहन में,
स्वार्थी वृत्ति अपनाता जन।
आपाधापी के चक्कर में,
खोता जाता वह अपनापन।।

इस अपनेपन को खोने में,
किस सुख से वंचित होता जन?
आपस के पावन रिश्तों में,
जो स्नेह वह दे न सकेगा धन।।

इस मोहक धन के अर्जन में,
अहंकारी अक्सर बनता मन।
अपनी बढ़ती इच्छाओं में,
सीमारेखा न कोई बन्धन।।

इस बन्धन के ही अभाव में,
संयमित न हो पाता जीवन।
ऐश्वर्य से ही विरासत में,
अनेक व्यसन अपनाता जन।।

इस व्यसनजन्य प्रवृत्ति में,
उलझे रहते समस्त जन।
आवश्यकता की लम्बी सूची में,
हरदम निमग्न हो उनका मन।।

इस चंचल मन के संयमन में,
सफल कहाँ हो पाता जन?
आज की दुनियादारी में,
विरला ही हो पाता सज्जन।।

वज्रपात

पर्वतीय धरा पर गिरा कहर,
दैवी प्रकोप से पीड़ित नर।
क्षति हिमखण्डों के गिरने पर,
अनेक दिवंगत अनेक बेघर।।

प्रकृति पर प्राणिमात्र निर्भर,
परस्पर सहायता को तत्पर।
धन-जन की हानि को सुनकर,
दहशत-सी छा गई मन पर।।

अनेक विमान उड़ान रहे भर,
हिमाच्छादित श्रृंखलाओं पर।
अनिवार्य सामग्री पहुँचे सत्वर,
सेवा कार्य बन गया दुष्कर।।

इस अनहोनी हिमवृष्टि पर,
बचाव दल संरक्षक बन कर।
अनथक प्रयास करने को तत्पर,
राहत पा ऋतु परिवर्तन पर।।

नियति के वश में समस्त नर,
दैवी छलना पर विस्मय कर।
वृद्ध जनों ने स्मृति संजोकर,
ऐसा प्रकोप देखा न उम्र भर।।

आत्मीय बन्धुओं के निधन पर,
इस नश्वर जीवन को कोस कर।
गाज गिरी जिन परिजनों पर,
मायूस रहेंगे वे जीवन भर॥

अनिष्ट भरे उदास अतीत पर,
जीना होगा यवनिका गिराकर।
जीवन किस तरह बिताएँगे नर,
मानसिक व्यथा से व्यथित होकर॥

सान्त्वना को बस सम्बल मानकर,
आकस्मिक प्रकोप सहने पर।
असीम आत्मिक बल अपना कर,
जन हों नव निर्माण की राह पर॥

छब्बीस जनवरी

गणतन्त्र दिवस को सबने मनाया,
मन खुशी से फूला न समाया।
लाखों की भीड़ में खुद को पाया,
विजय चौक का नज़ारा नज़र आया ।।

प्रत्येक प्रदेश की झाँकी आई,
स्वीय संस्कृति की झलक दिखाई।
त्रिविध सेनाओं की टुकड़ी आई,
विभिन्न परिधानों में परेड दिखाई ।।

अनेक तोपों की सलामी दी गई,
राष्ट्रपति की अगवानी की गई।
सैनिकों को भी श्रद्धांजलि दी गई,
भव्य पुष्पांजलि अर्पित की गई ।।

गण्यमान्य विभूतियों के भी दर्शन किए,
जनसमूह एकत्र इस गौरव के लिए।
ऐतिहासिकता ने जन के मन मोह लिए,
प्रसन्नमना दर्शक अपने घरों को चल दिए ।।

रक्षाबन्धन

रक्षासूत्र बाँध कर भाई को,
फूली न समाती हर बहिन।
उनके अति पावन स्नेह को,
प्रदर्शित करता रक्षाबन्धन।।

अमूल्य राखी के धागे को,
कलाई में बाँध संरक्षक बना,
भाई निभाता उत्तरदायित्व को,
बहिन को जब कोई उलझन।।

उत्सुक हो इस त्योहार को,
मनाते बालक, युवा, वृद्धजन।
बरसती श्रावणी पूर्णिमा को,
भाई को राखी बाँधेगी बहिन।।

समझ न सके बहिन मन को,
ऐसा न हो किसी भाई का मन।
एक ही खून के रिश्ते को,
सताए न अलगाव का बन्धन।।

सगा-सा मान धर्म भाई को,
बहिन बांधे राखी का बन्धन।
ऐसी बहिन की सुरक्षा को,
क्यों न हो आतुर भाई का मन ?

रक्षासूत्र की पावनता को,
मिटा न सके जाति का बन्धन।
इतिहास के साक्षी इस पर्व को,
हर्ष से मनाएँ भाई व वहिन।।

कलाई में बँधी हुई राखी को,
निरख कर पुलकित भाई का मन।
परख कर उसके प्रसन्न मन को,
लुभाता वहिन को रक्षाबन्धन।।

हादसा

रात्रि का अन्तिम प्रहर
व्यतीत होने पर भी,
अवसन्न मन:स्थिति
वोझिल-सा मस्तिष्क।
मुँदती हुई पलकें,
चाहते हुए भी
जग पाने में असमर्थ।
गवाक्ष से आभासित,
उदीयमान सूर्य का
तीव्र होता तापमान।
अजीब उदासी भरा
ग्रीष्मकालीन प्रात:काल।
असम्भाव्य सूचना का
कितना मौन संकेत ?
प्राणहीन-सी अभिव्यक्ति,
व्यथित अन्तर्मन।
अस्वस्थ देह की
निष्क्रिय अवस्था को,
झेलता हुआ
भावुक मानस।
स्तब्ध हो
सुनता रहा,
आत्मीय का
हृदय गति रुक जाने से;
होने वाला देहावसान।

मानसिक उत्तेजना भरा
एक भयानक हादसा;
यद्यपि कालान्तर में
स्मृति-रूप ग्रहण करेगा।
फिर भी
हँसता हुआ
बोलता हुआ
वह चेहरा
जो मुझे कल ही मिला था;
याद दिला रहा है बार-बार,
जीवन और मृत्यु का अन्तराल।

शोक स्मृति

मुझे पत्र का ही इन्तज़ार रहा,
मन चिन्ता से बेज़ार रहा।
होनी ने यही सुनाना था,
ऐसा तो कभी न जाना था।

जब कभी था मुझे ख़त आया,
था स्नेह भरा मन इतराया।
अन्तिम पत्र अब जब मिला,
तब ख़त्म हुआ वह सिलसिला।

थोड़े ही समय का परिचय था,
कितनी ममता अपनापन था?
परिजनों ने उनको है खोया,
पर मेरा मन भी है रोया।।

सौभाग्य भरा जीवन पाया,
सुख दुःख में भी साथ निभाया।
अल्पायु में टूटा बन्धन,
अकल्पित वियोग का सूनापन।।

कुल की मर्यादा को रख कर,
है वरद हस्त जो बन्धुओं पर।
सिर पर जिस माँ का था साया,
उनका दुःख कौन समझ पाया ?

नश्वर जीवन पर किसका वश ?
हो अन्त समय में सभी विवश।
हम उनको भुला न पाएँगे,
वे स्मृतियों में बस जाएँगे।।

श्रद्धेय जन ही साथ रहे,
एकाकी का दुःख कौन कहे ?
नियति ने उनको छीना है,
कितना क्षणभंगुर जीना है ?

श्रद्धेय के प्रति

असीम अपनेपन से पुलकित बन,
वात्सल्यानुभूति में निमग्न मन।
सान्त्वना पा कर के कृतज्ञ बन,
गौरवान्वित मन पर सजल नयन।।

पता नहीं कब स्वावलम्बी बन,
स्नेह भाव से उऋण होगा तन।
चिन्तित बन न सुलझे उलझन,
व्यथित न रखें मेरे प्रति मन।।

यत्किंचित् साम्प्रतम स्वस्थ बन,
आपका वत्सल भाव युक्त मन।
शुभकामना होगी अवलम्बन,
आस भरा महत्त्वाकांक्षी मन।।

बन्धुत्व भावना से विभोर बन,
सक्रिय बनना चाहे तन मन।
प्रेरक प्रेरणा हेतु जाए तन,
परम आत्मीय का मार्गदर्शन।।

मेरे अल्पज्ञ मन कृतज्ञ बन,
अवलम्बन बस आशीर्वचन।
श्रद्धेय के प्रति नतमस्तक बन,
सादर अभिवादन अभिनन्दन।।

हमदर्दी

आपकी ज़बान में मेरा अन्दाज़े बयान,
छोटा मुँह बड़ी बात जैसा लगेगा बखान।
ख्यालात के इज़हार जान आपकी पहचान,
सरपरस्त बन कर मानों मुझ पर मेहरबान ।।

मेरी खुशकिस्मती पाया आप सा कद्रदान,
आजकल हमदर्द खोज सकना नहीं आसान।
काबलियत जाँचें परखें कोई कोई इन्सान,
जायज़ नाजायज़ की सही कर सकें पहचान ।।

जिस्म ने दिया धोखा पर दिल नहीं अनजान,
बात की तह तक वह पहुँचे बन कर हैरान।
उदासी के आलम में लाचार पर अहसान,
बनेगा वह कर्ज़ जो चुकाना नहीं आसान ।।

आसपास मतलबपरस्ती से दिल परेशान,
वक़्त पड़ने पर होती अपनों की पहचान।
ज़िन्दगी में कशमकश झेले हर इन्सान,
आपका रहमदिल न भूलने वाला अहसान ।।

कविता की प्रतिक्रिया

रजनी का समापन,
उदीयमान सूर्य की
सुनहली आभा का आभास;
प्रात:काल का उन्मेष।
नीलिमा युक्त नभ,
मौसम विभाग की
सूचना के अनुकूल;
खुश्क मौसम का अहसास।
पर्वतीय शृंखलाओं के घेरे में,
बसा यह छोटा-सा ग्राम।
उसमें भी सामान्य गृह के,
छोटे से कक्ष में
गुज़रता शय्याग्रस्त जीवन;
अपने अन्तिम छोर से
अनजान एवं अनभिज्ञ।
दीवार घड़ी में समय,
आठ बज कर पैंतीस मिनट।
आकाशवाणी केन्द्र से,
प्रसारित कार्यक्रमों की
रूपरेखा के अनुसार;
प्रारम्भ हो गया है
प्रदेश के जाने माने
कवि का कविता पाठ।
परिचित होते हुए भी,
कवि अल्पज्ञ से
नितान्त अपरिचित।
क्योंकि जिस समय
स्नातकोत्तर परीक्षा पूर्ण कर,

जाने लगे वह कवि
तभी विश्वविद्यालय के
स्नातकोत्तर केन्द्र में,
प्रवेश लेने आया
हमारा सहपाठी वर्ग।
वैसे भी
जाना माना हस्ताक्षर
सर्वदा होता पूर्वपरिचित।
कवि को कहाँ स्मरण होगा,
आठ मिनट का
वह रेलगाड़ी का सफर।
आप स्वीय परिचितों से,
वार्तालाप में निमग्न।
उन्हीं परिचितों की
संगिनी के रूप में;
मेरा साथ होना
न होने के बराबर।
स्मृति पटल पर उभरा,
आपका वह प्रश्न ?
उनका मुझसे साथ कैसे ?
अर्थात् आपके अपने परिचित,
क्यों बने मेरे परिचित ?
पता नहीं किसलिए,
आपके मन में
उठा होगा यह सवाल ?
फिर एक बार और,
समरहिल से
रेलवे बोर्ड बिल्डिंग तक;
साथ हुई पैदल यात्रा।
आपके वही पूर्वपरिचित,
पुराने सहयोगी सहकर्मी;
और उनके व आपके मध्य
होने वाला अनवरत वार्तालाप।
मेरा साथ में चलना,

चुप्पी साधे हुए
गम्भीर बन कर;
जैसे स्वीय अस्तित्व
नकारना हो अभीप्सित।
सो यह परिचय,
समझना होगा
न होने के बराबर।
आपकी रचना का शीर्षक,
'बोधिसत्त्व सुनें'
कल्पना व अनुभूति का
आश्रय लिए हुए;
अगर समझ सकें
छिपा हुआ यथार्थ
सुन्दर लगी भाषिक संरचना।
कविता में निहित
भावधारा में,
यत्किंचित उलझाव
किंचित् दुरूह शब्दावली;
दूसरों की दृष्टि में।
क्योंकि कवि के
अन्तस् से उद्भूत,
भावना श्रेष्ठ एवं ग्राह्य
साहित्यिक परिवेश में।
इस ग्रामीण अंचल के,
आम आदमी की
समझ से परे;
सत्यमेव बुद्धिजीवियों के लिए।
आज संरचना में प्रवृत्त,
किसी भी सर्जक से
आम आदमी की शिकायत;
रचना में हो सहज प्रवाह
भाषा सरल, भाव ग्राह्य।
किन्तु अन्तस् की अभिव्यक्ति,
शाब्दिक चयन करती अकस्मात्।

टूट जाते समस्त बन्धन,
सारभूत एवं अतुकान्त;
अनुभूत अनुभूव हों संरचित।
भावना अवश्यमेव,
काव्य रूप, बिम्ब, प्रतीक,
अलंकार एवं छन्दों के;
सीमित दायरे में
भाषा के बँधने पर;
पिंजड़े में बन्द तोते सदृश
स्वतन्त्र होने को लालायित।
सम्भवतः इसी कारण
अल्पज्ञ की नज़र में,
आज की कविता
नित नवीन रूपों में दृष्टिगत।

चिन्ता

इस नश्वर तन की पीड़ा का,
सहभागी कोई न बन पाए।
सब को अपनी अपनी चिन्ता,
पर दुःख कोई ही समझ पाए।।

सदैव बखान अहसान का,
सेवाभाव कहाँ रह जाए?
ऐसा अहसान व्यर्थ करता,
मानसिक बोझ जो बन जाए।।

अहसानों के इस बोझ का,
निदान समझ में न आए।
क्योंकि विवश की विवशता,
उलझन का कारण बन जाए।।

शरीर दण्ड को सहने का,
साहस फिर कहाँ जुटा पाए?
तन और मन की निर्बलता,
तनाव की स्थिति में पहुँचाए।।

अन्तर्मन की इस चिन्ता का,
शोचनीय परिणाम बन जाए।
लाइलाज मर्ज में बदलता,
रोग समझ में न आए।।

अभाव आपसी समझ का,
किसी का मन न समझ पाए।
खो जाती आत्मनिर्भरता,
जब तन ही अशक्त हो जाए।।

असमर्थ के आत्मविश्वास का,
प्रत्यावर्त्तन न हो पाए।
निःस्वार्थ मन की सबलता,
स्वावलम्बन से कतराए।।

आकस्मिक अन्तर्द्वन्द्व का,
निवारण सम्भव हो पाए।
अपनत्व भाव और मित्रता,
जब मन में धीरज उपजाए।।

स्मृति संचयन

महानगर में विताए दिन कैसे भुला सकेगा मन ?
सम्पर्क में आए अनेक जन सहायक और स्नेही बन,
उन की याद आने पर खोया खोया सा रहेगा मन।...

प्रथमतः पर्यटक बन जहाँ हुआ था आगमन,
राजधानी का कर भ्रमण उल्लसित हुआ था मन।

भ्रमणीय स्थलों का चयन परिवेश का सम्मोहन,
सर्वथा आकर्षक बन क्यों न लुभाता जन का मन।

महानगर निवासी बन शुरू किया जब अध्ययन,
अचानक रुकावट बन धोखा दे गया यह तन।

क्षणिक दुःख का भागी बन पीड़ा का हुआ शमन,
यत्किंचित् जब स्वस्थ तन कर्मलीन बना जीवन।

जलवायु का कर परिवर्तन जन्मस्थली में व्यस्त बन,
पुनः किया शिक्षार्जन लक्ष्य के प्रति समर्पित बन।

मनोरम सुषमा से सम्पन्न प्रदेश मोहे सभी का मन,
प्रकृति से भी तृप्त नयन पर याद आए शहर परिजन।

वहाँ सुविधाएँ जहाँ परिजन तदर्थ कर प्रत्यावर्त्तन,
शोध प्रबन्ध का कर चयन विश्वविद्यालय में नामांकन।

प्रदेश-बन्धु पर्यटक बन अक्सर देते रहे दर्शन,
राजधानी देख चकित मन कर सके दिल्ली दर्शन।

शहरी वैभव निरखते नयन ऐतिहासिक स्थल से मोहित बन,
मानों सोचें मन ही मन काश ! शहरी पाते बन।

अकस्मात् अस्वस्थ बन शय्याग्रस्त बना जीवन,
असह्य विवश की उलझन सताने वाला नश्वर तन।

स्वयं चिन्ता का कारण बन मनःस्थिति हुई अवसन्न,
चिकित्सकों के सद्प्रयत्न मानों विफल गए हों बन।

अनेक परिचित सहयोगी बन मन को दे सके अवलम्बन,
समस्त परिजन चिन्तित बन बहलाते रहे मेरा मन।

शुभकामना का प्रतिफलन कुछ स्वस्थ हुआ यह तन,
चलने फिरने में अशक्त फिर भी सबल रहा यह मन।

पुनः प्रदेश प्रत्यावर्तन साथ में सभी परिजन,
कई स्मृतियों में डूबा मन निधि बस स्मृति संचयन।

मोहभंग

तथाकथित अपने लोगों से अच्छे लगें पराये लोग,
ईश्वर साक्षी बुरा न सोचा चाहा नहीं ऐश्वर्य का भोग।
कैसे अपने वे जो भूले किसी के जन्मार्जित संस्कार,
रग रग में जो रक्त प्रवाहित धन से आँका उन का प्यार।
कभी न कोई छीन सकेगा किसी के प्रति मन का सम्मान,
सहन की मर्मान्तक पीड़ा झेला कलम का भी अपमान।
स्नायविक तनाव के कारण सुधर न सके यह असाध्य रोग;
ईश्वर साक्षी बुरा न सोचा चाहा नहीं ऐश्वर्य का भोग ॥

अकारण किसी का मन तरसा कर सदा नहीं मिल पाता चैन,
उलझन में हरदम बीतें दिन बेचैनी में बीते रैन।
दरियादिली से हो लाभान्वित उल्टा जतलाते अहसान,
ठोकर को चुनौती मान कर जीने में समझूँ सम्मान।
कालान्तर में सत्य की परख का भी सबको मिलेगा सुयोग,
ईश्वर साक्षी बुरा न सोचा चाहा नहीं ऐश्वर्य का भोग ॥

क्षणभंगुर जीवन नश्वर काया पंचतत्त्व में मिल जाए,
मुट्ठी बाँधे शिशु आए जग में हाथ पसारे जन जाए।
सब को भाती अपनी नारी सब को प्रिय अपनी सन्तान,
निर्माणाधीन नीड़ उजाड़ कर कभी न पूरे हों अरमान।
अपनी क्षमता के बल पर व्यक्तित्व बने ये ग्रहों का योग;
ईश्वर साक्षी बुरा न सोचा चाहा नहीं ऐश्वर्य का भोग ॥

अचानक खोया स्नेह भाव निश्छल मन को था जिस पर नाज,
एकता विषयक स्वप्निल आदर्श पर यकायक गिरी गाज।
होनी में जो होना होगा कौन उस से कतराएगा,
मोहभंग का मार्मिक पहलू विरला ही समझ पाएगा।
वस्तुस्थिति न हो नकारात्मक संरचना नहीं मात्र संयोग,
ईश्वर साक्षी बुरा न सोचा चाहा नहीं ऐश्वर्य का भोग ॥

आह्वान

युवाओं के समक्ष आह्वान,
प्रयत्नशील वन वनें महान।

सत्यवाद का पथ प्रशस्त कर,
रक्षक वने प्रत्येक जवान।
दिव्य ज्ञान का दीप जला कर,
चिरस्थायी हो देश की शान।
युवाओं के समक्ष आह्वान......

अहिंसा का मार्ग अपनाकर,
गांधी जी का करें सम्मान।
मन वचन कर्म में रमकर,
करें सब ईश्वर का प्रणिधान।
युवाओं के समक्ष आह्वान......

दया धर्म का नीड़ वनाकर,
आत्मवत् लें सवको जान।
ऊँच-नीच का भेद मिटाकर,
सव को समझें एक समान।
युवाओं के समक्ष आह्वान......

महत् आदर्श को अपनाकर,
बालवृन्द हो ज्ञानवान।
असीम शक्ति का उद्बोधन कर,
परम तत्त्व को लें पहचान।
युवाओं के समक्ष आह्वान......

आत्मोत्सर्ग भाव धारण कर,
अनिवार्य देशभक्ति को मान।
परिश्रम का अवलम्बन कर,
लक्ष्य सर्वदा रखें महान।
युवाओं के समक्ष आह्वान...

उद्‌गार

आत्मा की आवाज़ में,
अन्तर्निहित प्रभाव से,
अछूता न रहे अन्तस्।
आतुर के उतावलेपन में
अपनी आतुरता से
अस्थिर बनता मानस।
अन्तर् के उद्वेलन में
अनेक समस्याओं से
अन्तर्द्वन्द्व ग्रस्त अन्तस्।
आहत के क्रन्दन में
आकुल की पीड़ा से
आहत भावुक मानस।
अभिव्यक्ति के इस रूप में
अन्तर्तम के निदर्शन से
आकर्षक रचना पावस।

सृष्टि

चिन्तन ने मन को बहलाया।
एकाकी का संगी सूनापन,
सोचने की सामग्री लाया।
अतीत को अन्तस्तल में समाए,
वर्तमान अहसास दिलाए।
भविष्य ने आँचल को फैलाया;
चिन्तन ने मन को बहलाया।।

सात्त्विक गुण सत्कर्म कराए,
राजसी गुण मन को भरमाए।
तामसी गुण को मोहे माया;
चिन्तन ने मन को बहलाया।।

ज़रा-सा दुःख जन झेल न पाए,
सुख में मन ही मन मुस्काए।
तितिक्षा का मर्म समझ न पाया;
चिन्तन ने मन को बहलाया।।

प्रकृति अपना करिश्मा दिखाए,
माया भी अपना जाल बिछाए।
जब से मानव धरा पर आया;
चिन्तन ने मन को बहलाया

अनुगूँज

विषम परिस्थितियों से अछूता न कोई देश न ही समाज।
समस्यात्मक परिवेश में उद्भ्रान्त लगे जनमानस आज।।
गण्यमान्य विभूतियों की जन्मस्थली हमारा देश,
सन्तों की दिव्य वाणी में यत्र तत्र अमर संदेश।
ज्ञान व कर्म का करे समन्वय साक्षर सामाजिक परिवेश;
विचार के कर्म में परिवर्तन से सम्भाव्य वातावरण विशेष।
सूक्ष्म स्तर पर सांस्कृतिक पर्यवेक्षण अनिवार्य आज।
विषम परिस्थितियों से......

सामाजिक यथार्थ के प्रति सजग रहे हर जन का मन,
दार्शनिक चिन्तन के अनुकूल बीत सके जन का जीवन।
भावनात्मक एकता के स्तर पर सोचे हरेक जन;
राज्यों का आपसी सहयोग सम्यक् राष्ट्रीय हितचिन्तन।
राष्ट्रीय एकता हेतु सद्प्रयत्न ही समय की माँग आज।
विषम परिस्थितियों से......

समसामयिक जीवन के अभिसाक्ष्य का प्रस्तुतीकरण,
मिटा सके भावाभिव्यक्ति का व्यवधानात्मक आवरण।
जागरूक विचारणा पर आधृत हो आत्मविश्लेषण;
बौद्धिक चेतना के बल पर हो सके जन का जागरण।
परम सत्य का उद्घोषक स्वर काश कहीं से गूँजे आज।
विषम परिस्थितियों से......

ग़मगीन

अपने हालात से बेचैन हो ग़मगीन का दिल,
सोच के दायरे में बँधकर रह जाता है।
किसी के भाग्य का पासा ही जब पलट जाए,
समझ के फेर से गलतफ़हमी उभर आए।
जब कभी अपने पर कोई रहम न कर पाए,
ज़रा सी बेसमझी तिल का ताड़ बन जाए।
बहस में बात का बिगड़ना कहर ढाता है;
सोच के दायरे में बँधकर रह जाता है॥
नागवार परेशानी में न रहती कोई कसर,
मुँह से निकली बात का होता ऐसा असर।
रास्ते से भटक गया हो जैसे राहगुज़र,
तलाश चैन की सामने ज़िन्दगी का सफ़र।
अनजाने राज़ को कोई ही जान पाता है;
सोच के दायरे में बँधकर रह जाता है॥
कमान से छूटा तीर वापिस कभी आता नहीं,
चिड़िया खेत चुग ले कौन पछताता नहीं।
साँच की आँच में झुलसना कोई छल तो नहीं,
दूर की सोच में यह दिल न डूब जाए कहीं।
जब कोई चैन भरी नींद न सो पाता है;
सोच के दायरे में बँधकर रह जाता है।

परिकल्पना

देश प्रेम को मन में संजोकर कर्मलीन बन जाएँ हम।
स्वर्णिम भविष्य की परिकल्पना कार्यान्वित कर पाएँ हम।

आज का युवावर्ग निस्सन्देह देश का भावी कर्णधार,
राष्ट्र रूपी नौका की युवाओं के हाथों में पतवार।
अनेक महान आत्माओं का कर सकें वे सपना साकार,
हर व्यवसायिक क्षेत्र में सहायक बन सकें उनके विचार।

राष्ट्र की प्रगति के पथ पर मिलकर कदम बढ़ाएँ हम;
स्वर्णिम भविष्य की परिकल्पना कार्यान्वित कर पाएँ हम ।।

जनजीवन में भावनाओं का सामञ्जस्य न हो दुश्वार,
नैतिक भावना का उन्नयन हो बस जीवन का आधार।
विकासोन्मुख प्रवृत्तियों के दृष्टिगोचर हों आसार,
युवाशक्ति का योगदान अविस्मरणीय रहे हर बार।

देश के सर्वतोमुखी विकास को अपना लक्ष्य बनाएँ हम;
स्वर्णिम भविष्य की परिकल्पना कार्यान्वित कर पाएँ हम।

राष्ट्र के हितचिन्तन हेतु झेल सकें संघर्ष अपार,
हरेक कवि का मन हो जनता के हृदय से एकाकार।
अन्तर्तम में देशभक्ति की भावधारा का हो संचार,
आदर्श प्राप्ति के लिए हो मन में त्याग की भावना अपार।

राष्ट्र के हेतु तन, मन, धन सहर्ष अर्पित कर पाएँ हम;
स्वर्णिम भविष्य की परिकल्पना कार्यान्वित कर पाएँ हम ।।

कवि और संरचना

कवि का नश्वर तन मिट्टी में मिल जाएगा,
रचना के माध्यम से बाद में याद आएगा।

आह से उपजी होगी अमर कवि की वाणी,
मार्मिक सम्मोहन में बँधेगा हर प्राणी।
मौलिक संरचना प्रभाव दर्शाती है,
जग में शेष बस याद ही रह जाती है।
वाल्मीकि सदृश अमरत्व जो पाएगा;
रचना के माध्यम से बाद में याद आएगा।
कवि का नश्वर तन...

प्रकृति उसके लिए एक नियामत होगी,
प्रेरणा लेखन की मानों विरासत होगी।
दैवी रूप से प्रतिभा विकसित होती है,
सर्जना साहित्यिक सुनियोजित होती है।
दूरदर्शी मानस सूक्ष्म दृष्टि पाएगा;
रचना के माध्यम से बाद में याद आएगा।
कवि का नश्वर तन...

अदृश्य शक्ति के प्रति जन श्रद्धानत कायल,
ज़रा सी ठेस से होता भावुक मन घायल।
सोच का विषय मन की उलझन होती है,
भावना की अभिव्यक्ति सर्जन होती है।
जब व्यथित जन का मन परख पाएगा;
रचना के माध्यम से बाद में याद आएगा।
कवि का नश्वर तन...

जीवन में सदैव रहेगी कोई उलझन,
सब में जागृत करना होगा अपनापन।
लक्ष्य की पूर्ति करने में सफल होती है,
भावना सहयोग की निश्छल होती है।
जब मैत्री के स्तर को भी समझ पाएगा;
रचना के माध्यम से बाद में याद आएगा।
कवि का नश्वर तन...

अन्तरात्मा की आवाज़ बनती कविता,
अन्तर्द्वन्द्व की मन में बहती सरिता।
परिस्थिति ही पथ की प्रदर्शक होती है,
यथार्थ की अनुभूति भी सजग होती है।
ऐतिहासिक अतीत जो न भूल पाएगा;
रचना के माध्यम से बाद में याद आएगा।
कवि का नश्वर तन...

शरीर नश्वर पर आत्मा अमर होगी,
परम शक्ति से मिलन को आतुर होगी।
भले बुरे को वह निर्णायक होती है,
मुक्ति की साधना में सहायक होती है।
तपस्या से जो साक्षात्कार कर पाएगा;
रचना के माध्यम से बाद में याद आएगा।
कवि का नश्वर तन...

बिस्तर में क़ैद*

ज़िन्दगी 'बिस्तर में क़ैद' दिलनशीं तो नहीं।
जिस्म का दर्द कभी ख्यालों में खो जाए कहीं॥

जब जज़्बात की दुनिया का राही होता नसीब।
किसी के दर्द से हमदर्दी होना कम तो नहीं॥

जहीन ज़हन ही बस पहुँच पाता दिल के करीब।
आम आदमी को हासिल वो महारत तो नहीं॥

जहान में करिश्मे कुदरत के चाहे लगते अजीब।
सभी में उन से उलझने का भी दम तो नहीं॥

बिताना पड़ता वक़्त जैसा होता जिसका नसीब।
ग़मगीन बन के जीने में भी मसर्रत तो नहीं॥

साँस के चलने तक दिल रह लो आस के करीब।
अभी लहू का दौर रगों में इतना कम तो नहीं॥

इज़हारे ख़्यालात से सुलझाऊँ उलझन अजीब।
तनाव 'लफ़्ज़ों' में बदले दिल में रहे तो नहीं॥

---

*डा० राजदेव सिंह से क्षमायाचना सहित

केवल प्रकृति ही मूलाधार,
इस सृष्टि की सर्जनहार।
अहम् भाव अविधाकृत बन्धन,
मानस करो ब्रह्म का चिन्तन ॥

नामस्मरण

जब हरि का स्मरण करे मानव,
आह्लादित मन हो जाता है।
अनुभूत परम सुख का अनुभव,
जो सात्त्विक भाव जगाता है।।

गुरु की परम कृपा से मन,
जिज्ञासु सा बन पाता है।
अन्तस् उद्भूत हरेक प्रश्न,
आसानी से सुलझाता है।।

श्रद्धाजनित भाव उन्मुख बन,
शिष्य शक्ति को पाता है।
वह सत्य तत्त्व का ज्ञानी जन,
तो नित्य शान्त ही रहता है।।

असत् भावना से विरक्त,
योगी जन ही रह पाता है।
जो ऐसे गुरु से हो दीक्षित,
वह अनुगृहीत हो जाता है।।

दृश्यमान जगत् में ही जन,
विराग भाव को पाता है।
आत्मबोध की ओर उन्मुख मन,
साधक सा हो जाता है।।

स्वाध्याय निरत हो कर जो मन,
गुण दोष विवेचन करता है।
सत्य स्वरूप ब्रह्म का ज्ञान,
लक्ष्य उसी का होता है।।

शारीरिक विपदा से मानव,
बेवस सा हो जाता है।
नाम स्मरण का पवित्र भाव,
पर्याप्त शान्ति पहुँचाता है।।

अष्टाँग मार्ग में विहित विधान,
जब वन्दनीय बन जाता है।
धारणा, ध्यान, समाधि ज्ञान,
तब योग प्राप्ति करवाता है।।

चित्तवृत्तियों का निरोध,
योग लक्षण कहलाता है।
चेतन शक्ति का स्वरूप बोध,
कैवल्य पद बन जाता है।।

होता रहे सतत आराधन,
मन विभोर हो जाता है।
परहित में लीन हो जो जन,
सत्पथ को वह अपनाता है।।

देवात्म शक्ति का दर्शन,
ध्यान योग से होता है।
निखिल तत्त्व का कारण बन,
ब्रह्म रूप अधिष्ठाता है।।

हर जन चाहे जिसे विश्व में,
सुन्दर जीवन वह होता है।
स्वयं न चाहे कुछ विश्व में,
वही तो सब कुछ पा जाता है।।

हारे को हरि नाम का सुमिरन,
परम आनन्द पहुँचाता है।
भव के उस पार अवलोकन,
ध्यानस्थ मन कर पाता है।।

पंक्तियों का विस्तृत आयाम,
अब पर्यवसान को पाता है।
पूज्य गुरुवर को कर प्रणाम,
मन आशीर्वाद ही चाहता है।।

चिन्तन

प्रश्न सदा ही होता निराकार,
मानव प्रदत्त उसका होता आकार।
अनुत्तरित न रहे कोई प्रश्न,
विचारोन्मुख अगर रहे मन॥

मायामय लगता यह संसार,
प्रभु शक्ति बस अपरम्पार।
चित् अचित् तत्त्वों के संयोजन,
परम तत्त्व का हो अनुशीलन॥

केवल प्रकृति ही मूलाधार,
इस सृष्टि की सर्जनहार,
अहम् भाव अविद्याकृत बन्धन,
मानस करो ब्रह्म का चिन्तन॥

अचित् से ऊपजे यह संसार,
चिन्मय स्वरूप जिसका आधार।
सत् चित् आनन्द से सम्पन्न,
भाव संवाहक योगी जन॥

ध्येय हो आत्मसाक्षात्कार,
नष्ट हो अज्ञानान्धकार।
आतमा का होता उर्ध्वगमन,
साधक होगा जब ध्यानमग्न॥

ब्रह्म की सत्ता निर्विकार,
विश्वरूप यह कर्णाधार।
प्रत्यगात्म विषयक विवेचन,
भक्ति ही जिसका आलम्बन ।।

शब्दों का हो जाता विस्तार,
कल्पना हो जाती साकार।
अध्यात्म विषयक प्रतिपादन,
स्वाध्याय पर आधृत चिन्तन ।।

शनैः शनैः

प्रकृति के निस्सीम प्राँगण में,
जननी के ममता भरे आँचल में;
होता है सर्वप्रथम शिशु का अवतरण।
निश्छल एवं निष्कपट भाव से;
क्रीड़ा कर प्रकृति की क्रोड़ में;
व्यतीत हो जाता बाल्य जीवन।

ब्रह्मचर्य-आश्रम के अन्तर्गत,
आता मानव के जीवन का;
सुनहला अंश विद्यार्थी जीवन।
विद्या का अर्जन कर,
उस बालक-रूप का;
शनैः शनैः होता यौवन में पदार्पण।

तत्पश्चात् गृहस्थाश्रम में हो जाता प्रवेश,
जहाँ समस्याएँ रहती अधिकांशतः शेष।
अनेकानेक उलझनों में उलझा उसका मन,
हर क्षण सोचता सुलझाव का साधन।

तदनन्तर वानप्रस्थाश्रम में प्रविष्ट हो मानव,
कोई भी अवशिष्ट रहता नहीं चाव।
समस्याएँ निवटती जातीं अव अविराम,
जन का मन पूर्णतः चाहता है विश्राम।
ब्रह्म जिज्ञासा से सम्वन्धित सद्विचार,
जिज्ञासु के मानस में उठता अव अनेक वार।

अन्ततः सन्यासाश्रम में प्रवेश भी अनिवार्य,
ब्रह्मविषयक कल्पना भी वन जाती अपरिहार्य।
सद्गुरु से दीक्षित मन सर्वथा अनिवार्य,
योगी जन को दुर्लभ परम पद हो स्वीकार्य।।